Journal of Energy Research and Environmental Technology (JERET)
p-ISSN: 2394-1561; e-ISSN: 2394-157X; Volume 6, Issue 1; January-March, 2019, pp. 70-72
© Krishi Sanskriti Publications
http://www.krishisanskriti.org/Publication.html

भारतीय संस्कृति और पर्यावरण: एक विश्लेषण

डॉ हरीश रौतेला
कुमाऊँ यूनिवर्सिटी
नैनीताल (उत्तराखंड)
E-mail: drharishuk@gmail.com

प्रस्तावना :परिवर्तन प्रकृति का नियम है। यह एक लगातार चलने वाली प्रक्रिया है जो विभिन्न तथ्यों में चाहे वह बड़ा हो अथवा छोटा अनवरत रूप से चलती रहती है। इसके साथ ही हमारे प्रतीक और सामाजिक सांस्कृतिक पर्यावरण को प्रभावित करती है। यह **प्रक्रिया** सम्पूर्ण जगत में व्याप्त है। परन्तु इसके पैमाने में अंतर अवश्य होता है। ये बदलाव धीमी गति से भी आ सकते हैं और तीव्र गति से भी उसके साथ ही इसका क्षेत्र समिति भी हो सकता है और व्यापक भी। परिवर्तन का यह नियम विभिन्न लोगों के लिए भिन्न भिन्न होता हो जो कि उनके दृष्टिकोण पर निर्भर है। प्रकृति के दृष्टिकोण से परिवर्तन सदैव ही तटस्य होता है।

सामान्यत : आपदाओं विशेषकर प्राकृति उपदाओं से मनुष्य सदैव ही भयभीत रहा है। आपदाओं की उत्पत्ति का सम्बन्ध मानवीय क्रियाकलापों से ही है और मनुष्य इसको भलीभांति जानता भी है। इन्हीं आपदाओं में आज सर्वोपरि है पर्यावरण प्रदूषण। आज भारतवर्ष ही नहीं सम्पूर्ण विश्व में इसकी चर्चा है और **इसके** बचाव की आवश्यकता भी महसूस की जा रही है। पर्यावरण की रक्षा करना हम सभी का नैतिक कर्तव्य है। यह हम सभी की कल्पना से परे है कि यदि पर्यावरण पूरी तरह से प्रदषित है जाने तो सम्पूर्ण संसार का क्या हर्ष होगा? जीव-जन्तु,बनस्पति पर संकट के ऐसे काले होने बादल जिनका हट पाना **असंभव** सा प्रतीत **होता** नज़र आयेगा। अतः पर्यावरण की रक्षा में प्रत्येक नागरिक की व्यक्तिगत भागीदारी सुनिश्चित होनी चाहिए साथ ही उसके हृदय में अपने पर्यावरण के प्रति भावात्मक लगाव भी होना चाहिए, तभी इस लक्ष्य की दशा एवं दिशा स्पष्ट होकर अपने गतंव्य तक पहुँचेगी। इसकी भावना प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में कि मातृ प्रकृति ने हमें जो भी दिया है उसकी सुरक्षा भी हमें ही करनी है। लेकिन तेज़ी से बढ़ती जनसंख्या और आर्थिक विकास के कारण हमारे देश में प्यावरण से सम्बन्धित कई समस्यायें आ रही हैं। जिसका मुख्य कारण औद्योगीकरण-विस्तार एवं जंगल का नष्ट होना है।

भारतीय संस्कृति और प्रकृति: भारतवर्ष में सनातन धर्म में प्रकृति पूजन को इसमें संरक्षण के **तौर** पर माना जाता है। यह हमारा ही देश है जहाँ प्रकृति के विभिन्न रूपों के साथ रिश्तों को भी जोड़ा गया है जहाँ पेड़ की तुलना संतान से की गयी है तो नदी को माँ समरूप माना गया है। इसका एक ही कारण था वो ये कि प्राचीन काल से ही हमारे मुनि अपनी वैज्ञानिक सोच के आधार पर ये जान गये थे कि मानव जीवन प्रकृति पर निर्भर तो है लेकिन इसके संरक्षण के लिए आवश्यक है कि प्रकृति और मानव के मध्य ऐसे सम्बन्ध विकसित कर दिये जाये जो युगों तक अटूट हों और हुआ भी यहीं। यदि ये सम्बन्ध परम्परायें न होती **तो** भारत की स्थिति भी संकट रूपी नाव पर सवार किसी पश्चिमी देश की तरह डांवाडोल होती। ''वसुदैव''–कुटुम्बम'' की भावना को दृष्टिगत रखते हुये यह हमारे **पूर्वजों** की सोच थी कि सम्पूर्ण मानव जाति का अस्तित्व का आधार हमारी माता अर्थात पृथ्वी है और पृथ्वी का आधार जंगल एवं जल है। इसीलिए इसका संरक्षण आवश्यक है।

इसी प्रकार हम नदी, पर्वत, पवन, सूर्य, पृथ्वी आदि के प्रति श्रद्धा भक्ति रखते हैं क्योंकि हमारी भारतीय संस्कृति का सामाजिक जीवन से गहरा रिश्ता है। यह हमारी भारतीय संस्कृति की ही विशेषता है कि हम अपने हमने आदर्श, अपने पूर्वजों के कार्यों को अपने आदर गर्व और गौरव की चीज़ मानता है यही हमारी संस्कृति की सबसे बड़ी खूसूरती है। कृष्ण प्रिया–तुलसी की भारतीय संस्कृति में इसकी महत्ता का अंदाजा इसी बात से

लगाया जा सकता है कि हर हिन्दू के घर में लगभग तुलसी का एक पौधा अवश्य ही होता है। तुलसी पत्र को माँ लक्ष्मी का स्वरूप माना जाता है, इसी कारण भगवान विष्णु को तुलसी अत्याधिक प्रिय है। सनातन धर्म में ईश्वर को भोग लगाने की क्रिया भी बिना तुलसी पत्र के सम्पूर्ण नही मानी जाती।

भारत संस्कृति और सभ्यता का देश है जिसकी बढ़ती अर्थव्यवस्था और विकास में यहाँ का भौगोलिक पर्यावरण सहायक रहा है। यहाँ प्रकृति के प्रत्येक अवयव को देवता स्वरूप मानकार पूजा जाता है, इसके पीछे हमारी भारतीय संस्कृति की धार्मिक भावना तो रही ही परन्तु साथ ही पर्यावरण चेतना के घौतक से भी इंकार नहीं किया जा सकता है और उसके संरक्षण के प्रति दृष्टिकोण का भी प्रतीक है। इसी कारण हमारी संस्कृति पर्यावरण के साथ सन्तुलन बनाकर पुष्यित और पल्लवित हुयी है। भौगोलिक पर्यावरण के आंगन में ही किसी समाज का सांस्कृतिक पर्यावरण जन्त लेता और फलता फूलता है।

भारतीय संस्कृति में वटवृक्ष को समस्त मनोकामनाएं पूर्ण करने वाला कल्पवृक्ष माना जाता है। गुणों से युक्त इस विशालकाम और छायादार वृक्ष का उल्लेख कई धार्मिक ग्रन्थों में है। रामचरित मानस के वालकांड में उल्लेखित चॉपाई के अनुसार महायोगी भोलेनाथ भी वटवृक्ष के नीचे ही समाधि लगाकर तप साधना में विलीन रहते थे।

तंह पुनि संभु समुझिपन आसन। बैठे बटतर, करि कमलासन।।

अनेकों अनेक गुणों को अपने अन्दर समाहित किये हुये इस वृक्ष में वायुमण्डल से कार्बनडाइ ऑक्साइड गृहण करने और ऑक्सीजन छोड़ने की क्षमता वेजोड़ है। यह हर प्रकार से लोगों शास्त्रों में इसे सुख सॉभाग्य, शांति का प्रदाता बताया गया है। यह हमारी ही भारतीय संस्कृति है जहाँ वृक्षों को देवता मान इनको वन्दनीय कहा गया है।

धत्ते भरं कुसुमपत्रफलावलीनां धर्मव्यथां वहति शीत भवा रूजश्च।

यो देहमर्पयति चान्यसुरवस्य हेतोस्तक्मैं वदानयगुरवे तखे नमोऽतु।।

अर्थात

जो वृक्ष फूलः पत्ते और फूलों के वोझ को उठाये हुए धूप की तपन और शीत की पीड़ा सहन करता है पर सुख के लिए अपना शरीर अर्पित कर देता है, उस वन्दनीय श्रेष्ठ तक को नमस्कार है। पंत की कैसी महान भावना है, वृक्षों के प्रति अनुराग की। इतना ही नही, मत्स्य पुराण में तो कहा गया है–

कूप समावापी, दशवापी–समोहन्द्रः

दश हन्द समः पुत्रों, दश–पुत्रसमो द्रुमः

अर्थात दस कुओं के बराबर के बावड़ी है, दस बावडियो के बराबर एक तालाब है, दस तालाबों के बराबर एक पुत्र है और इस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष है।

हमारी संस्कृति वृक्षों एवं उनके पर्यावरणीय महत्व से भलीभांति परिचित थी इसीलिए उन्हें इतना सम्मान दिया गया है। महर्षि वेदव्यास ने महाभारत में कहा है–फूलों और फलों से समृद्ध वृक्ष मानव को इस लोक में तृत्प करते हैं जो मनुष्य वृक्ष का दान करता है उसे ये वृक्ष पुत्र समान परलोक में तार देते हैं। इसके साथ ही यदि वराह पुराण की चर्चा करें तो वृक्षों के महत्व को निम्न प्रकार बताया गया है – ''एक व्यक्ति जो एक पीपल, एक नीम, एक बड़े दस फूल वाले पौधे अथवा लताएं, दो अनार, दो नारंगी और पाँच आम के वृक्ष लगाता है वह नरक में नहीं जायेगा।''

उपरोक्त ग्रन्थों, पुराणों वेदों आदि से स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति में प्रारम्भ से ही पर्यावरण की महत्ता को समझते हुये वृक्षों को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है। वृक्षों की पूजा, सूर्य के समक्ष जल का अर्ध्य, जीवों की सुरक्षा, पवित्रता आदि का वातावरण निरन्तर चलता रहा। जितने भी कार्य यहाँ सम्पन्न हुये उसके पीछे यहाँ की संस्कृति ही रही है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि जितने भी पुराने विश्व प्रसिद्ध शिक्षण संस्थान (शान्ति निकेतन, नालंदा विश्वविद्यालय आदि) स्थापित किये, उन्हें प्रकृति की गोद सघन जंगलों की छाया में ही वसाया गया। बड़े तीर्थ (गंगा, रामेश्वर, द्वारका, प्रयाग आदि) नदियों तथा सागर के किनारे स्थापित हुये। यहाँ तक कि महान विचारक (स्वामी विवेकानन्द, महर्षि दयानन्द, रवीन्द्रनाथ ठाकुर आदि) की कर्मभूमि भी प्रकृति प्रधान रही। ये सभी हमारी सांस्कृतिक धरोहर ही हैं। इनकी अपनी महत्ता ने इन्हे भारतीय संस्कृति का रूप प्रदान करने के साथ ही भारतवर्ष के पर्यावरण संरक्षण के सन्दर्भ में एक अनूठी और अलौकिक पहचान भी दी है। भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है। जिसका मुख्य उद्देश्य मानव जाति को ऐसी जीवन पद्धति की ओर बढ़ाना है जो मनुष्य को सांस्कृतिक आदर्शो से जोड़ सके।

उपरोक्त चर्चाओं से यह सुस्पष्ट है कि मानव पर्यावरण पर संस्कृति का पूर्ण रूप से प्रभाव पड़ता है। हमारी संस्कृति मात्र भारतीयों को ही नही अन्य देशों के लोगों को भी आकृष्ट करती रही है। मेरे विचारानुसार कोई भी राष्ट मात्र अपनी आर्थिक, सामाजिक सम्पन्नता अथवा राजनैतिक सत्ता के आधार पर ही महान नही होता अपितु उसका सांस्कृतिक पर्यावरण सशक्त होना परम आवश्यक है क्योंकि **उत्तम** शारीरिक एवं मानसिक विकास सांस्कृतिक पर्यावरण में ही होता है। भारतीय संस्कृति में प्रकृति एवं पृथ्वी का जीवधारियों के प्रति दृष्टिकोण का कहीं कोई तोड़ नहीं है हिन्दू धर्मशास्त्रों में उल्लिखित विभिन्न निर्देशों, आज्ञाओं के अतिरिक्त संस्कृत ग्रन्थों में अनेक कहानियां भी मिलती हैं जो हमारे पूर्वजें के पर्यावरण प्रेम को दर्शाती है। विश्व की सभी वस्तुओं में प्रकृति द्वारा सन्तुलन उत्पन्न करने की भरपूर व्यवस्था है जिसका उदाहरण वायुमण्डल में उपस्थित विभिन्न प्रकार की खाद्य श्रंखलायें एवं खाद्य–जाल हैं।

मनुष्य ने प्रकृति और वावारकरण को अपने उपयोग की एक वस्तु समझा लिया है। अपनी असीमित आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रकृति एवं वातावरण से मनमाना व्यवहार करता चला जा रहा है। औधोगीकरण एवं भौतिक सुख सुविधाओं के नाम पर मानव दुःशासन वनकर प्रकृति का प्रत्येक दिन चीरहरण कर रहा है। इक्कीसवीं सदी के इस अर्थ–प्रधान कलियुग में कल और अर्थ दोनों का ही सर्वोच्च महत्व हैं लेकिन हम सभी भलीभांति परिचित हैं कि वर्तमान में मनुष्य पर्यावरणीय संस्कार के अभाव में प्रकृति का विनाश कर रहा है जो निश्चित रूप से मानव जाति के लिए घातक है। विकास के नाम पर हो रहे लगातार दोहन मानव जाति की असीमित आवश्यकताओं के कारण पर्यावरण प्रदूषण की समस्या और भी गंभीर होती जा रही है।

अतः आज आवश्यकता इस पर्यावरणीय प्रदूषण की समस्या से निपटने की है। इन पर्यावरणीय समस्याओं को उचित शिक्षा के माध्यम से स्थानीय स्तर पर ही हल किया जा सकता है। स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि ''मनुष्य के लिए सभी कार्य–क्षेत्रों का व्यवहारिक ज्ञान होना आवश्यक है और यह तभी संभव है जब हम अपने आसपस के वातावरण के अंर्तसम्बधों को समझे ओर उनका व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करें।''

निष्कर्ष: निष्कर्षित रूप में यह कहा जा सकता है कि इक्कीसवीं सदी में यह आवश्यक है कि पर्यावरण को बचाने के लिए पादप संपदा का संतुलित उपयोग हो एवं स्वच्छ और संतुलित पर्यावरण प्राकृतिक **सम्पदाओं** को बचाने के साथ साथ भारतीय संस्कृति का भी संरक्षण हो।